

९-इति युगदृष्टान्तः ।

परमाणुप्रदृष्टान्तः कथ्यते दशमो मया । सर्व-चक्रेशिनां दण्डरत्नं हस्तचतुष्टयम् ॥७९॥
काले तस्य प्रदण्डस्य सर्वत्र परमाणवः । रूपान्तरं परिप्राप्य कदाचिच्च पुनस्तथा ॥८०॥
दण्डरत्नत्वमायान्ति नृत्वं न प्राप्यते गतम् । ज्ञात्वेति पण्डितैः कार्यं शर्मकोटि प्रदं शुभम् ॥८१॥

१०-इति परमाणुदृष्टान्तः ।

भयशतैरिह दुर्लभतामितं परमसारं नृजन्म जगद्धितम् ।
बुधजनाः सुविचार्य शुभश्रिये जिनवृषं प्रभजन्तु जगद्धितम् ॥८२॥
इति कथाकोशे मनुष्यभवदुर्लभत्ववर्णने दश दृष्टान्ताः समाप्ताः ।

१०१. भावानुरागरक्ताख्यानम्

जिनपादद्वयं नत्वा सर्वसौख्यप्रदायकम् । भावानुरागरक्तस्य प्रवक्ष्येहं कथानकम् ॥१॥
अवन्तिविषये चारुज्जयिन्यां भूपतिर्महान् । धर्मपालः प्रिया तस्य धर्मश्रीर्धर्मवत्सल ॥२॥
श्रेष्ठी सागरदत्ताख्यः सुभद्रा श्रेष्ठिनी तयोः । नागदत्तोभवत्पुत्रो जिनपादाब्जषट्पदः ॥३॥
तथा समुद्रदत्तस्य श्रेष्ठिनो रूपमण्डिता । पुत्री समुद्रदत्तायां प्रियंगुश्रीर्बभूव हि ॥४॥

१०. परमाणु दृष्टान्त

चार हाथ लम्बे चक्रवर्ती के दण्डरत्न के परमाणु बिखर कर दूसरी अवस्था को प्राप्त कर लें और फिर वे ही परमाणु दैवयोग से फिर कभी दण्डरत्न के रूप में आ जाएँ तो असम्भव नहीं, पर मनुष्य पर्याय यदि एक बार दुष्कर्मों द्वारा व्यर्थ खो दिया तो इसका फिर उन अभागों जीवों को प्राप्त हो जाना जरूर असम्भव है । इसलिए पण्डितों को मनुष्य पर्याय की प्राप्ति के लिए पुण्यकर्म करना कर्तव्य है ॥७९-८१॥

इस प्रकार सर्वश्रेष्ठ मनुष्य जीवन को अत्यन्त दुर्लभ समझ कर बुद्धिमानों को उचित है कि वे मोक्ष सुख के लिए संसार के जीवमात्र के हित करने वाले पवित्र जैनधर्म को ग्रहण करें ॥८२॥

१०१. भावानुराग-कथा

सब प्रकार सुख के देने वाले जिनभगवान् को नमस्कार कर धर्म में प्रेम करने वाले नागदत्त की कथा लिखी जाती है ॥१॥

उज्जैन के राजा धर्मपाल थे । उनकी रानी का नाम धर्मश्री था । धर्मश्री धर्मात्मा और बड़ी उदार प्रकृति की स्त्री थी । यहाँ एक सागरदत्त नाम का सेठ रहता था । इसकी स्त्री का नाम सुभद्रा था । सुभद्रा के नागदत्त नाम का एक लड़का था । नागदत्त भी अपनी माता की तरह धर्मप्रेमी था । धर्म पर उसकी अचल श्रद्धा थी । इसका ब्याह समुद्रदत्त सेठ की सुन्दर कन्या प्रियंगुश्री के साथ बड़े ठाटबाट से हुआ । ब्याह में खूब दान दिया गया । पूजा उत्सव किया गया । दीन-दुःखियों की अच्छी सहायता की गई ।

तेन श्रीनागदत्तेन सा सती सुमहोत्सवैः। दानपूजाकुलाचारैः परिणीता गुणोज्ज्वला ॥५॥
 तस्या मैथुनिकः कोपि नागसेनो दुराशयः। तदा वैरं वहंश्चित्ते संस्थितः स्वगृहे कुधीः ॥६॥
 एकदोषोषितः स श्रीनागदत्तो विचक्षणः। धर्मानुरागसंयुक्तः श्रीमज्जैनालये मुदा ॥७॥
 कायोत्सर्गे स्थितो धीमांस्तं विलोक्य कुचेतसा। नागसेनेन हारं स्वं धृत्वा तत्पादयोस्तले ॥८॥
 अयं चौरो भवेदित्थं पूत्कारः पापिना कृतः। दुष्टात्मा निन्दितं कर्म किं करोति न कोपतः ॥९॥
 तत्समाकर्ण्य दृष्ट्वा च तत्कारेण प्रवेगतः। राज्ञः प्रोक्तं क्रुधा तेन मार्यतामति जल्पितम् ॥१०॥
 नीतोसौ मारणार्थं च नागदत्तस्तलारकैः। यः खड्गस्तद्गले मुक्तस्तदा तत्पुण्ययोगतः ॥११॥
 संजातः प्रोल्लसत्कान्तिहारो वा द्युमणिद्युतिः। देववृन्दैर्नभोभागात्पुष्पवृष्टिः कृता स्तुतिः ॥१२॥
 अहो धर्मानुरागेण साधूनां साधुकारिताम्। के के भव्या न कुर्वन्ति येऽत्र सददृष्टयो भुवि ॥१३॥
 तद्दर्शनान्महास्फीतौ जैनधर्मस्थशर्मिणः। धर्मपालमहीनाथनागदत्तौ सुभक्तितः ॥१४॥
 दीक्षामादाय जैनेन्द्रीं मुनी जातौ विचक्षणौ। अन्ये चापि महाभव्या जैनधर्मे रतास्तराम् ॥१५॥

प्रियंगुश्री को उसके मामा का लड़का नागसेन चाहता था और सागरदत्त ने उसका ब्याह कर दिया नागदत्त के साथ। इससे नागसेन को बड़ा ना-गवार मालूम हुआ। सो उसने बेचारे नागदत्त के साथ शत्रुता बाँध ली और उसे कष्ट देने का मौका ढूँढ़ने लगा ॥२-६॥

एक दिन उपासा नागदत्त धर्मप्रेम से जिन मन्दिर में कायोत्सर्ग ध्यान कर रहा था। उसे नागसेन ने देख लिया। सो इस दुष्ट ने अपनी शत्रुता का बदला लेने के लिए एक षड्यन्त्र रचा। गले में से अपना हार निकाल कर उसने नागदत्त के पाँवों के पास रख दिया और हल्ला कर दिया कि मेरा हार चुराकर लिए जा रहा था, सो मैंने इसके पीछे दौड़कर इसे पकड़ लिया। अब ढोंग बनाकर ध्यान करने लग गया, जिससे यह पकड़ा न जाये। नागसेन का हल्ला सुनकर आसपास के बहुत से लोग इकट्ठे हो गए और सिपाही भी आ गए। नागदत्त पकड़ा गया उसे ले जाकर राजदरबार में उपस्थित किया गया। राजा ने नागदत्त की ओर से कोई प्रमाण न पाकर उसे मारने का हुक्म दे दिया। नागदत्त उसी समय बध्य-भूमि में ले जाया गया। उसका सिर काटने के लिए तलवार का जो वार उस पर किया गया, क्या आश्चर्य कि वह वार उसे ऐसा जान पड़ा मानों किसी ने उस पर फूलों की माला फेंकी हो। उसे जरा भी चोट न पहुँची और उसी समय आकाश से उस पर फूलों की वर्षा हुई जय जय, धन्य धन्य, शब्दों से आकाश गूँज उठा। यह आश्चर्य देखकर सब लोग दंग रह गए। सच है—धर्मानुराग से सत्पुरुषों का, सहनशील महात्माओं का कौन उपकार नहीं करता। इस प्रकार जैनधर्म का सुखमय प्रभाव देखकर नागदत्त और धर्मपाल राजा बहुत प्रसन्न हुए। वे अब मोक्षसुख की इच्छा से संसार की सब माया-ममता को छोड़कर जिनदीक्षा ले साधु हो गए और बहुत से लोगों ने—जो जैन नहीं थे, जैनधर्म को ग्रहण किया ॥७-१५॥

सकलभुवनभव्यैः सेवितः श्रीजिनेन्द्रस्तदुदितवरधर्मो निर्मलः शर्महेतुः।
विशदतरसुखश्रीः प्राप्यते यत्प्रसादात्स भवतु मम शान्त्यै कर्मणां शान्तिकर्ता ॥१६॥
इति कथाकोशे भावानुरागरक्ताख्यानं समाप्तम्।

१०२. प्रेमानुरागरक्ताख्यानम्

संप्रणम्य जिनाधीशं प्रोल्लसद्धर्मनायकम्। प्रेमानुरागरक्तस्य रचयामि कथानकम् ॥१॥
विनीतविषये रम्ये साकेतापत्तनेऽभवत्। राजा सुवर्णवर्माख्यः सुवर्णश्रीप्रिय प्रियः ॥२॥
श्रेष्ठी सुमित्रनामा च सम्पदासारसंभृतः। प्रेमानुरागरक्तोसौ जैनधर्मे विचक्षणः ॥३॥
एकदा पूर्वरात्रौ च स्वगृहे शुद्धमानसः। कायोत्सर्गेण मेरुर्वा संस्थितो निश्चलस्तराम् ॥४॥
देवेनैकेन चागत्य भार्यावित्तादिकं तदा। हत्वा परीक्षितः सोपि चलितो न स्वयोगतः ॥५॥
ततो देवः समालोक्य स्थिरत्वं श्रेष्ठिनो महत्। कृत्वा तस्य सुमित्रस्य स्तुतिं शर्मशतप्रदाम् ॥६॥
स्वयं च प्रकटीभूय विद्यां गगनगामिनीम्। दत्त्वासौ शांकरीं भक्त्या स्वर्गलोकं ययौ मुदा ॥७॥
तं प्रभावं विलोक्योच्चैः सर्वे भव्यजनास्तदा। श्रीमज्जिनेन्द्रसद्धर्मे संजाता भक्तिनिर्भराः ॥८॥
केचिच्च मुनयः केचिच्छ्रावकव्रतमण्डिताः। केचित्सम्यक्त्वरत्नेन राजिता धर्मवत्सलाः ॥९॥

संसार के बड़े-बड़े महापुरुषों से पूजे जाने वाले, जिनेन्द्र भगवान् का उपदेश किया पवित्र धर्म, स्वर्ग-मोक्ष के सुख का कारण है इसी के द्वारा भव्यजन उत्तम से उत्तम सुख प्राप्त करते हैं। यही पवित्र धर्म कर्मों का नाश कर मुझे आत्मिक सच्चा सुख प्रदान करें ॥१६॥

१०२. प्रेमानुराग-कथा

जो जिनधर्म के प्रवर्तक हैं, उन जिनेन्द्र भगवान् को नमस्कार कर धर्म से प्रेम करने वाले सुमित्र सेठ की कथा लिखी जाती है ॥१॥

अयोध्या के राजा सुवर्णवर्मा और उनकी रानी सुवर्णश्री के समय अयोध्या में सुमित्र नाम के एक प्रसिद्ध सेठ हो गए हैं। सेठ का जैनधर्म पर अत्यन्त प्रेम था। एक दिन सुमित्र सेठ रात के समय अपने घर में कायोत्सर्ग ध्यान कर रहे थे। उनकी ध्यान-समय की स्थिरता और भावों की दृढ़ता देखकर किसी एक देव ने सशंकित हो उनकी परीक्षा करनी चाही कि कहीं यह सेठ का कोरा ढोंग तो नहीं है। परीक्षा में उस देव ने सेठ की सारी सम्पत्ति, स्त्री, बाल-बच्चे आदि को अपने अधिकार में कर लिया। सेठ के पास इस बात की पुकार पहुँची। स्त्री, बाल-बच्चे रो-रोकर उसके पाँवों में जा गिरे और छुड़ाओं, छुड़ाओं की हृदय भेदने वाली दीन प्रार्थना करने लगे। जो न होने का था वह सब हुआ परन्तु सेठजी ने अपने ध्यान को अधूरा नहीं छोड़ा, वे वैसे ही निश्चल बने रहे। उनकी यह अलौकिक स्थिरता देखकर उस देव को बड़ी प्रसन्नता हुई उसने सेठ की शतमुख से भूरी-भूरी प्रशंसा की। अन्त में अपने निज स्वरूप में आ और सेठ को एक साँकरी नाम की आकाशगामिनी विद्या भेंट कर आप स्वर्ग चला गया। सेठ के इस प्रभाव को देखकर बहुतेरे भाइयों ने जैनधर्म को ग्रहण किया, कितनों ने मुनिव्रत, कितनों ने श्रावकव्रत और कितनों ने केवल सम्यग्दर्शन ही लिया ॥२-९॥